# रामटेक

## वनवास के दौरान यहां रुके थे प्रभु राम

नागपुर से करीब 50 किलोमीटर दूर रामटेक नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक और धार्मिक स्थान है, जो प्राचीन राम मंदिर और महाकवि कालिदास से जुड़ाव की वजह से मशहूर है। रामटेक स्थित पहाड़ी श्रृंखला को सिंधूरगिरि पर्वत भी कहा जाता है। मान्यता है कि प्रभु श्रीराम वनवास के दौरान यहां माता सीता और भाई लक्ष्मण के साथ रुके थे, इसका उल्लेख वाल्मीकि रामायण और पद्मपुराण में मिलता है। यहीं पर अगस्त्य ऋषि का आश्रम था। मान्यता यह भी है कि महर्षि अगत्स्य द्वारा यहीं पर प्रभु श्रीराम को ब्रह्मास्त्र दिया गया था। हिंदू धर्मग्रंथों के अनुसार प्रभु श्रीराम ने यहीं पर राक्षसों का संहार करने की प्रतिज्ञा ली थी, जिसका वर्णन रामचरित मानस में मिलता है। वैसे भी टेक का अर्थ प्रतिज्ञा होता है।

अजय त्रिवेदी
उप निदेशक युवा कल्याण



### श्रीराम ने यहीं पर ली राक्षसों के संहार की प्रतिज्ञा

जब श्रीराम ने इस स्थान पर हर कहीं हड्डियों के ढेर देखे, तो उन्होंने इस बारे में ऋषि अगत्स्य से प्रश्न किया। इस पर उन्होंने बताया कि यह उन ऋषियों की हड्डियां हैं, जिनके यज्ञ और पूजा में राक्षस विघ्न डालते थे। इसके बाद श्रीराम ने राक्षसों के संहार की प्रतिज्ञा ली। इसी स्थान पर ऋषि अगत्स्य द्वारा दिए गए ब्रह्मास्त्र से ही श्रीराम ने रावण का वध किया। इस मंदिर को लेकर कहानी है कि प्रभु श्रीराम ने वनवास के दौरान इस स्थान पर चार महीने तक माता सीता और लक्ष्मण के साथ समय बिताया था। माता सीता ने यहीं पहली रसोई बनाई थी और स्थानीय ऋषियों को भोजन कराया था।

### किले जैसा आभास देता है मंदिर

एक छोटी पहाड़ी पर बने रामटेक मंदिर को गढ़ मंदिर भी कहा जाता है। केवल पत्थरों से बने होने के कारण यह मंदिर किसी किले जैसा लगता है। यह पत्थर एक दूसरे के ऊपर रखे हुए हैं। इसका निर्माण 18 वीं शताब्दी में नागपुर के मराठा शासक राजा रघुजी भोंसले ने छिंदवाड़ा में देवगढ़ के दुर्ग पर विजय प्राप्ति के बाद किया था। मंदिर के पूरब की ओर सुरनदी बहती है। मंदिर परिसर में एक तालाब भी है, जिसे लेकर मान्यता है कि इसमें पानी कभी कम या ज्यादा नहीं होता है। हमेशा सामान्य जल स्तर रहता है। ऐसा माना जाता है कि जब भी बिजली चमकती है, तो मंदिर के शिखर पर ज्योति प्रकाशित होती है, जिसमें भगवान राम का अक्स दिखाई देता है।

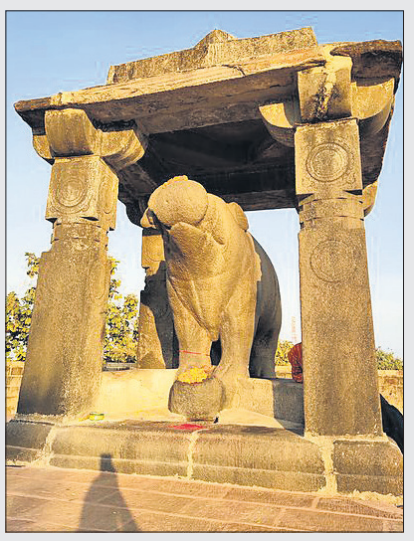

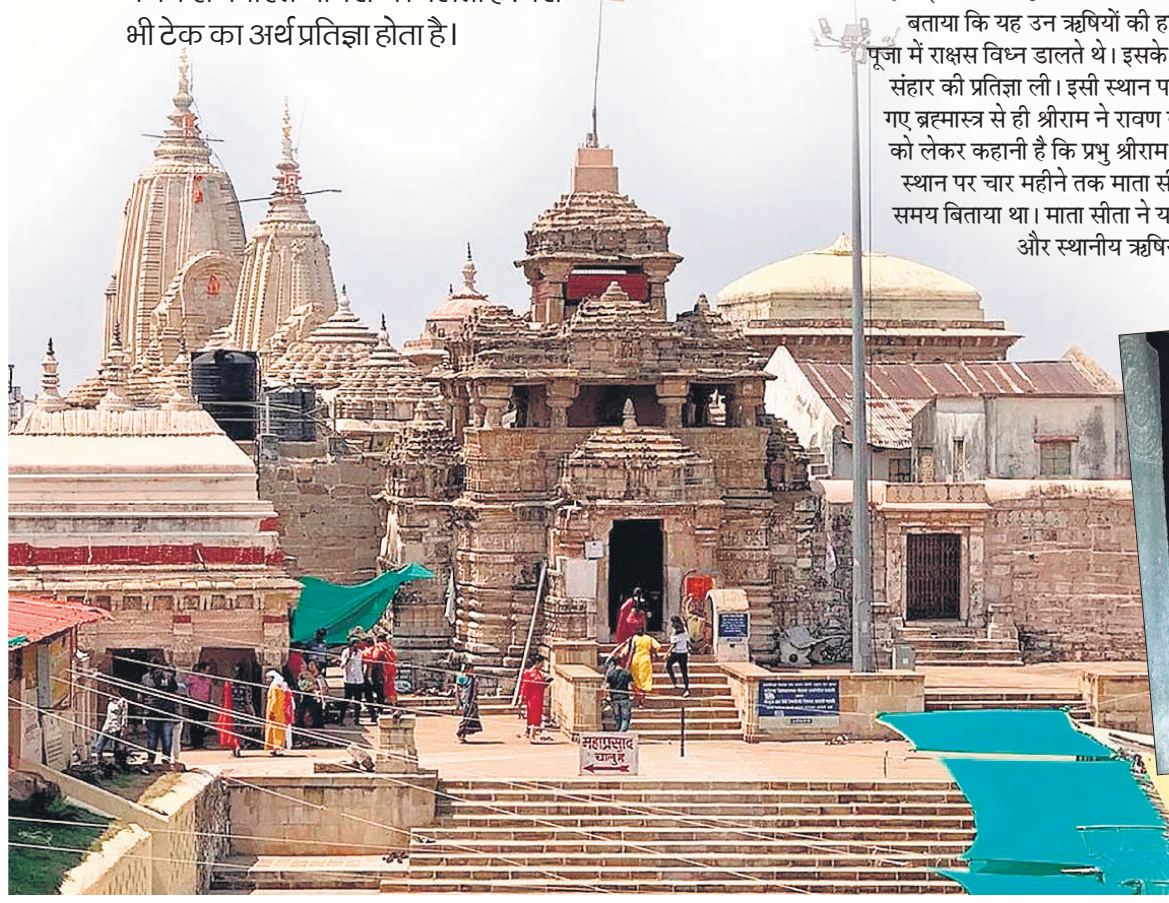

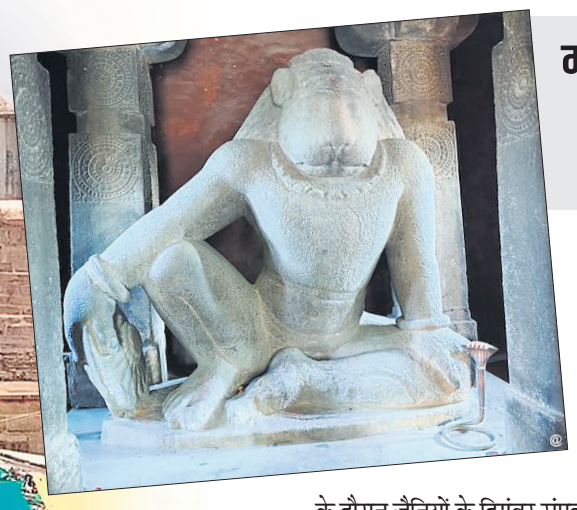



### महाकवि कालिदास ने यहां पर लिखा मेघदूत

रामटेक में महाकवि कालिदास जी का एक भव्य दिव्य स्मारक भी मौजूद है। यहीं पर कालिदास द्वारा मेघदूत काव्य की रचना किए जाने का उल्लेख है। इस जगह को रामगिरि भी कहा जाता है। रामटेक में दिगंबर जैन मंदिर भी है, जिसका निर्माण 17 वीं शताब्दी के दौरान जैनियों के दिगंबर संप्रदाय द्वारा किया गया था, जो भगवान महावीर के अनुयायी थे। यह मंदिर जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण केंद्र और महाराष्ट्र के सबसे पुराने जैन मंदिरों में से एक है।



आर्ट गैलरी

## जूली मेहरेतु की पेंटिंग सिक्स बार्डोज

जूली मेहरतु की कृति 'सिक्स बार्डोज : हिम (बिहाइंड द सन)' 2018 में निर्मित एक प्रभावशाली चित्र है, जो उनकी आध्यात्मिक और कलात्मक गहराई को दर्शाता है। यह कृति उनकी 'सिक्स बार्डोस' श्रृंखला का हिस्सा है, जो बौद्ध धर्म में जीवन और पुनर्जन्म के बीच की छह संक्रमणकालीन अवस्थाओं (Bardos) से प्रेरित है। मेहरतु ने इस श्रृंखला की प्रेरणा चीन की मोगाओ गुफाओं (Mogao Caves) की यात्रा के बाद ली थी। 'बार्डो थडोल' (तिब्बती बुक ऑफ द डेड) के दर्शन को आधार बनाकर, उन्होंने मानवीय चेतना के जटिल प्रवाह को कैनवास पर उतारा है। यह विशेष पेंटिंग 25-रंगों वाली एक्वाटिंट (aquatint) तकनीक से बनाई गई है, जो इसे रंगों और रेखाओं का एक जीवंत सागर बनाती है।

### जूली के बारे में

जूली मेहरेतु का जन्म 1970 में अदीस अबाबा, इथियोपिया में हुआ था। 1970 के दशक के आखिर में, ओगाडेन युद्ध के कारण इथियोपिया में राजनीतिक उथल-पुथल हुई और 1977 में मेहरेतू मिशिगन चली गईं। हाई स्कूल से ग्रेजुएशन करने के बाद, उन्होंने कलामाजू कॉलेज से बैचलर ऑफ आर्ट्स की डिग्री हासिल की और बाद में रोड आइलैंड स्कूल ऑफ डिजाइन से मास्टर ऑफ फाइन आर्ट्स की डिग्री प्राप्त की। असल में कई महाद्वीपों और संस्कृतियों में उनके अनुभवों ने उन्हें सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों का एक अनोखा नजरिया दिया है। वह कला, वास्तुकला और पिछली सभ्यताओं के इतिहास को परखती हैं और उन्हें प्रवासन, क्रांति, जलवायु परिवर्तन, वैश्विक पूंजीवाद और प्रौद्योगिकी के मौजूदा विषयों के साथ मिलाती हैं। उनकी प्रेरणा के स्रोत गुफा चित्रों, कार्टोग्राफी, गणितीय डिजाइनों, एशियाई सुलेख, भित्ति चित्रों, वास्तुशिल्प प्रस्तुतियों और समाचार इमेजरी से आते हैं। कभी-कभी उनका काम इतना स्तरित होता है कि वे जीवाश्म स्थलाकृतियों जैसा दिखता है। वह वर्तमान में न्यूयॉर्क शहर में रहती हैं।



## चौक पूरना : भारतीय सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति

मानव स्वभाव से ही रचनात्मक रहा है। आदि काल से लेकर वर्तमान तक उसने अपने अनुभवों, अनुभूतियों और जीवन में घटने वाली घटनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए विविध रूपों का सृजन किया है। उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों और साधनों के माध्यम से मानव ने अपने भावों को आकार दिया और यही प्रक्रिया कला के प्रारंभिक स्वरूपों की जननी बनी। समय के साथ मानव ने न केवल भौतिक विकास किया, बल्कि अपनी कल्पनाओं, विश्वासों और आध्यात्मिक अनुभूतियों को भी कला के माध्यम से साकार किया। लोक कला इसी सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति का रूप है। *-फीचर डेस्क*

कोई भी कला लोक मानस से जन्म लेती है, उसी से पोषित होती है और समाज की सामूहिक चेतना को प्रतिबिंबित करती है। लोक कला की विशेषता यह है कि इसमें कलाकार सीमित साधनों और सरल रेखाओं के माध्यम से भी प्रभावशाली एवं ओजपूर्ण चित्रांकन कर देता है। यह कला किसी औपचारिक प्रशिक्षण, विद्यालय या संस्थान की मोहताज नहीं होती, बल्कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी पारिवारिक परंपरा के रूप में आगे बढ़ती है। मां, दादी और नानी जैसे बुजुर्गों को बनाते देखकर अथवा उनसे सीखकर यह कला जीवन का अंग बन जाती है।

लोक कला का एक अत्यंत महत्वपूर्ण रूप 'चौक' है। चौक में स्वस्तिक, कलश, चरण, कमल, शंख, सूर्य, चंद्र, सप्त-कमल और अष्ट-कमल जैसे प्रतीकों का निर्माण किया जाता है, जिनका गहरा दार्शनिक और धार्मिक महत्व है। उदाहरणस्वरूप कलश को मानव शरीर का प्रतीक माना जाता है और उसमें भरा जल जीवन-रस का द्योतक है। यह लक्ष्मी का भी प्रतीक है और लगभग सभी शुभ एवं मांगलिक कार्यों में कलश-स्थापना अनिवार्य मानी जाती है। प्रागैतिहासिक काल के शैलचित्रों में लोक कला के बीज रूप दिखाई देते हैं। सिंधु सभ्यता से प्राप्त मिट्टी के पात्रों और मुहरों पर अंकित चित्रों में भी लोक परंपरा की स्पष्ट झलक मिलती है। मौर्य काल में यक्ष-यक्षिणी की मूर्तियां, सातवाहन तथा उत्तरवर्ती कालखंडों में शिल्प और चित्रकला के माध्यम से लोक कला की निरंतरता दिखाई देती है। मध्यकालीन चित्रशैलियों- पाल, अपभ्रंश, राजस्थानी और पहाड़ी में भी लोक परंपरा का सशक्त स्वरूप देखने को मिलता है। आगे चलकर इसी परंपरा ने आधुनिक भारतीय चित्रकला को भी गहराई और दिशा प्रदान की। चौक को उसके उपयोग और उद्देश्य के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में बांटा जा सकता है। मांगलिक चौक विवाह, गृह प्रवेश, छठी, वर्षगांठ और जन्मदिन जैसे शुभ अवसरों पर बनाए जाते हैं। विवाह के समय सगाई, तिलक, द्वार-पूजा और मंडप में आटे व हल्दी से चौक पूरने की परंपरा है। गृह प्रवेश के अवसर पर भूमि को गोबर से लीपकर, स्वच्छ कर पाटा पर कलश स्थापना हेतु चौक बनाया जाता है।



### मांगलिक चौक

मांगलिक कार्य तिथि, माह, पक्ष, नक्षत्र और गणना के अनुसार किए जाते हैं। विवाह, गृह प्रवेश, वर्षगांठ, छठी आदि अवसरों पर चौक का निर्माण किया जाता है। विवाह में सगाई, तिलक, द्वार-पूजा और मंडप में सूखे आटे व हल्दी से चौक पूरने की परंपरा है। गृह प्रवेश या जन्मदिन के अवसर पर भूमि को गोबर से लीपकर, स्वच्छ कर पाटा पर कलश स्थापना हेतु अलंकरण किया जाता है, इसे ही मांगलिक चौक कहा जाता है।

### संस्कार चौक

हिंदू धर्म में सोलह संस्कारों की परंपरा है और लगभग सभी संस्कारों में चौक का विधान मिलता है। जन्म के समय दीवारों पर शक्ति-देवताओं का अंकन किया जाता है। छठी के अवसर पर आटे का चौक पूरकर दीप प्रज्वलित किया जाता है। बरही में घर से द्वार तक पांच रेखाओं और मध्य में वृत्त का निर्माण किया जाता है। अन्नप्राशन, पाटी पूजन और उपनयन संस्कार में ओम, स्वस्तिक, श्री आदि प्रतीकों से युक्त चौक बनाए जाते हैं।

### कल्याणकारी चौक

यह धार्मिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। देवी-देवताओं को आसन देने हेतु चौक का निर्माण किया जाता है। सत्यनारायण कथा, श्रीमद्भागवत कथा, अखंड रामायण पाठ, विशेष अनुष्ठानों में मूर्ति-स्थापना, कलश-स्थापना, नवग्रह पूजन, अखंड दीप प्रज्वलन और यज्ञ-वेदी सजाने हेतु चौक पूरना कल्याणकारी माना जाता है।

### व्रत-त्योहार चौक

हिंदू धर्म में अनेक व्रत-त्योहारों पर चौक पूरने की परंपरा है। नवरात्रि, नाग पंचमी, रक्षाबंधन, हरतालिका तीज, गणेश चतुर्थी, करवा चौथ, अहोई अष्टमी, दीपावली, गोवर्धन, भैया दूज, छठ, देवोत्थान एकादशी, दशहरा, होली आदि अवसरों पर भिन्न-भिन्न प्रकार के चौक बनाए जाते हैं। ये आटा, हल्दी, रोली, गेरू, गोबर आदि से निर्मित होते हैं और जन-आस्था तथा सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्त करते हैं। चौक में गेरू, खड़िया, हल्दी, पीली मिट्टी, गोबर और रोली जैसी स्थानीय एवं प्राकृतिक सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। इनसे निर्मित रूप केवल सजावटी नहीं होते, बल्कि लोगों की आस्था, विश्वास और धार्मिक मान्यताओं से गहराई से जुड़े होते हैं। आज के समय में कला के अनेक आधुनिक रूप देखने को मिलते हैं, किंतु लोक कला आज भी अपनी सादगी, आत्मीयता और सर्वग्राह्यता के कारण समाज के हर वर्ग को समान रूप से आनंदित करती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसका स्वपोषित और आत्मनिर्भर स्वरूप है। यह जनसामान्य से जुड़ी रही है, इसलिए इसे न तो राजाश्रय की आवश्यकता पड़ी और न ही प्रबुद्ध वर्ग के संरक्षण की।